आनर किलिंग

हुश्न तवस्सुम निहाँ

आनर किलिंग

घड़ी ने चार का अलार्म दिया नहीं कि डोरबेल झनझना उठी। जरीना बेगम ने बगैर पूछ-पाँछ के ही दरवाजा खोल दिया। सामने मास्टर पुत्तन साहब। ठीक चार बजे डोर बेल खनखनाने का मतलब पुत्तन मास्टर एक दिन दादी अम्मा ने कुछ पुलकते हुए कहा था 'क्यूँ जरीना, ये जमील कौन से मग रिबी बादशाह का जिक्र करता रहता है जिसे देखकर लोग घड़ियाँ मिलाया करते थे। उसके वक्त की पाबंदी की वजह से?

https://www.hindiadda.com/aanar-killing/

जरीना बेगम समझ गईं ये प्रसंग दादी अम्मा ने पुत्तन मास्टर को मदद-ए-नजर रखते हुए छेड़ा है। मुस्काती हुई बोली थीं 'नैपोलियन'

'ओ... हाँ... वहीं नुपुलियन'

अभी बात आधी ही जुबाँ तक पहुँची थी कि दरवाजे पर दस्तक हुई। दोनों औरतें एक दूसरे को देख मुस्करा उठीं। दादी माँ ने आवाज लगाई

'तशरीफ लाएँ उस्ताद जी... '

और सामने झम से कोई चीज आ कर खड़ी हो गई। आँखें चुंधिया गईं। आँगन भर में उजाला फैल गया। ये हुई ना बात!

वास्तव में पुत्तन मास्टर साहब एक दिलचस्प शख्सियत थे। ला-सानी। बेमिसाल... एक ऐसी शख्सियत जिसकी निगाह में 'कल' का कोई वजूद नहीं था। 'कल' का मतलब था नथिंग मोर... ना आगत की हौपड़, ना विगत की खालिश। पुत्तन मास्टर, वो शख्स जिसे 'कल' शब्द पर यकीन ना था।'कलों' पर वह विश्वास करते ही ना थे। जाने ये उनका आंतरिक खौफ था या मनमौजीपन, यायावरी या फक्कड़पन, सृष्टि द्वारा प्रदत्त तीनों कालों को तिड़ी-बिड़ी कर रखा था उन्होंने। आगत के स्वागत में ना कभी उन्होंने पलकें बिछायीं, ना विगत पर कभी उन्हें मातम जदाँ देखा गया। चालीस-पैंतालिस की उम्र, अर्से से शहर उन्हें देखता आ रहा है। किंतु किसी की आँख को ये नहीं खबर कि कब, किस पेड़ पर उगे वह और कहाँ खाद-पानी पाया। झील के पानी पे वह जैसे अनायास ही उग आए थे। उड़ती-उड़ती खबर होती थी कि वह पुरानी बाजार स्थित राजा कोठी के किसी हिस्से में रहते हैं। मगर फिर भी उनकी तरह उनका दौलतखाना भी सबके लिए रहस्य ही था।

फज्र की अजान होते-होते वह शहर में नामुदार हो जाते और मगरिब लगते-लगते वह किसी अदृश्य आसमान में छुप रहते। उनके जमीन-आसमान कभी किसी के हाथ ना आए। मास्टर साहब इसलिए कहलाते थे कि वह अपेक्षाकृत कुछ ज्यादा काबिल और जहीन होने के साथ-साथ ट्यूशन भी लेते थे। बल्कि ट्यूशन ही लेते थे। ये एक तरह की समाज सेवा भी थी और उनकी रोजी-रोटी का जरिया भी। सरकारी नौकरी उन्हें करनी नहीं। स्कूल कॉलेज उनकी राह में बाँहें फैलाए खड़े रहें तो खड़े रहें। ये उनके लिए नितांत गैरत की बात थी कि वह नौकरी पर जाएँ।

सरकार की नौकरी बजाने जाएँ। हुं... हुं... इससे बेहतर तो मरने चले जाएँ। ऐसे आत्मसम्मान को गिरवी रख कर थोड़े ही जिया जाता है। वह सिर्फ ट्यूशन पढ़ाते और वाजिब मेहनताना लेते। रोज का रोज। कहा ना, उन्हें 'कल' से कोई सरोकार ना था, ना आनेवाले कल के लिए कुछ सहेज के रखना चाहते थे, ना ही बीते हुए कल के लिए रीतते, पछताते, ना भूतो ना भविष्यति, बस आज ही उनकी निगाह में होता, ट्यूशन पढ़ाने जाते तो पढ़ाने के तुरंत बाद उस दिन की फीस एक-दो रुपये जो भी हो वसूलते और चलते बनते। बकाया वह करते नहीं... 'ना... भई ना... कल हो ना हो... खाना होटल पर खाते। वहाँ भी रोज का रोज हिसाब कर आते।'

एक रोज होटल मालिक ने मुरव्वतन कहा था 'मास्टर साहब, क्या जल्दी है, महीने भर का हिसाब इकट्ठा कर दीजिएगा। ये रुपये-आठ आना रोज में बरकत नहीं होती।'

और वह सूखा जा जवाब देते 'नहीं भई, कल का क्या भरोसा। आज खा कर जाऊँ, कल आँखें ही ना खुलें। मैं कर्जदार हो कर मरना नहीं चाहता।'

तब हलीम टेलर मुँह में पान दबाते एक आँख दबाकर बोले थे।

'अरे मास्टर जी, कुछ ले लिवाकर जाइए तो ज्यादा अच्छा है। कम अज कम मय्यत पर चार रोनेवाले तो इकट्ठा होंगे, 'कि हाय... पैसे डूब गए, मर गया साला।' आगे पुत्तन मास्टर ने जोड़ा। और छोटा-सा ढाबानुमा होटल कहकहों से भर गया। इसी बीच पुत्तन मास्टर ने बाजूवाली गुमटी से पान का बीड़ा ले कर मुँह में दबाया और...

'अच्छा भाइयो शब्बा खैर...' कहते हुए चलते हुए। उसके बाद बाकियों ने देर तक पुत्तन मास्टर के कसीदे पढ़े। पुत्तन मास्टर की दिनचर्या की तरह उनका रहन-सहन, रख-रखाव भी कम दिलचस्प नहीं।

कपड़े की दुकान से वह सुनहरे व रुपहली जरी के पूरे के पूरे थान उठा लाते। उस थान में से चूड़ीदार, शेरवानी, टोपी व छतरी उतरती। यकसां पोशाक में वह अजीब ही शख्सियत लगते। तवे सी काली देह उनकी रूपहले सुनहरे जरी के तारों से ऐसे सजी रहती मानो दुल दुल निकल पड़ा हो। जरी की टोपी के नीचे से निकले हुए काँधे तक बिखरे खिचड़ी केश। पैरों में नागरा जूतियाँ। चाहे लसलसाती गर्मी हो या कंपकंपाती ठंड। जरी उनसे नहीं छूटता। मौसमों ने कभी उन्हें नहीं छुआ।

वे मजे से जीते रहे। कभी किसी ने उन्हें किसी और रूप में, या किसी अलहदा किस्म की पोशाक में नहीं देखा। क्योंकि जरी के सिवा उन्होंने कभी कुछ पहना ही नहीं। उन्हें

पसंद ही नहीं। सिफत ये कि सब कुछ मैच करता हुआ होना चाहिए। सो, जित्ते सेट सूट, उतनी ही टोपियाँ, उत्ती की छतरियाँ। अल्लाह जाने ये उनके काबिल दिमाग की सनक थी या एक्स्ट्राआख्रडनरी बने रहने की धुन। मगर ये अपने आप में ला जवाब... जिधर भी निकल जाते, झम्म से उजाला हो जाता। धूप या चाँदनी में उनकी जरीवाली छतरी के रूपहले-सुनहले तार खूब लश्कारे मारते।

आँखें चुँधिया जातीं और लोग-बाग मुस्करा उठते 'अरे, ये तो अपने मास्टर जी हैं... ' फकाफक अंग्रेजी बोलते। कोई समझे चाहे ना समझे उनकी बला से। कभी-कभी लोग उनसे ब्याह कर लेने की बात कहते तो वह कन्नी काट जाते। कतई नहीं... बिल्कुल भी नहीं... औरतों का रोग नहीं लगाना...

किंतु इधर के दिन कुछ अजीब ही कैफियत लिए उतरे। कुछ दिनों से दादी अम्मा उनके हाथ-पाँव छानकर बैठ गई थीं, 'भई मास्टर जी, अब कोई रोटी पकाने वाली ले ही आओ। कहाँ तक होटल का रूखा-फीका खाना खाओगे। परिवार बनाओ। घर बनाओ। जाओ तो कम से कम चार चीजें छोड़कर जाओ... मास्टर साहब दाहिने बाएँ करके कन्नी काट जाते। किंतु कब तक। दादी अम्मा तो किल्ला गाड़ के बैठ गईं। अब मास्टर जी बता ही दो शादी के बारे में क्या कहते हो, 'ख्वाहमख्वाह क्यूँ जवानी बर्बाद कर रहे हो, खुदाया ये तो सोचो कि सुनती हूँ आपकी काफी जमीनजायदाद है, आपके बाद उन्हें कौन सँभाले गा। यूँ सीने पर पहाड़ ले कर जाओगे दुनिया से कोई उसकी हिफाजत करनेवाला तो होना चाहिए' मास्टर जी चौंके।

'लो... एक और टेंशन।'

'कुछ नहीं तो आप मेरी ही बेटी जहरा खातून का हाथ पकड़ लो। कमसिनी में ही बेवा हो गई। अभी उसकी उम्र ही क्या है?... आपका घर सँभाले गी। आपके बच्चे पैदा करेंगी... '

'बच्चे... ? नक्को बाबा... ' उन्होंने मन ही मन 'ना' में सिर हिलाया।

हफ्ते भर तक दादी अम्मा मास्टर जी को शादी का सबक पढ़ाती रहीं।

आखिर पक-पका के मास्टर जी ने एक दिन बड़ा उम्दा फैसला लिया। सीधे कचहरी पहुँचे। वसीयतनामा तैयार करवाया और लाकर दादी अम्मा के हाथ में पकड़ा दिया।

'अम्मा जी, ये रहा वसीयतनामा। मैंने अपनी सब जायदाद जहरा खातून को सौंप दी है। अब बेफिक्र हो कर दुनिया से जा सकूँगा। लेकिन ब्याह के लिए मुझसे ना कहें... '

और बाहर निकल गए। दादी अम्मा कभी कागजात देखतीं, कभी खड़ से बंद हुआ दरवाजा। ठगी सी खड़ी रह गईं। जरीना बेगम दौड़कर आईं।

'क्या हुआ अम्मा, मास्टर साहब चले क्यूँ गए... ?

दादी अम्मा ने कागजात थमा दिए जरीना बेगम ने खोला तो होश उड़ गए।

'हैं... !' उस दिन के बाद से मास्टर जी ने उस मुहल्ले का मुँह तक नहीं देखा।

मुहल्लेवाले भी तरस गए उन्हें देखने के लिए। अलबत्ता, अब मास्टर साहब खुश थे। बिल्कुल खुश... अपने सिर का बोझ किसी और के कंधे पर डाल कर जैसे बिल्कुल हल्के हो लिए थे। ऐसा नहीं कि जीवन से उन्हें विरक्ति थी, जीना उन्हें आता ना था, ऐसा बिल्कुल ना था। बिल्कुल नहीं, बड़े जिंदा दिल इंसान थे।

जीवन-शक्ति से भरे-भरे कभी बिंदास ठहाके लगाते और कभी कहीं डूबकर खो रहते। कभी बेपनाह खामोश, कभी बेसाख्ता कहकहे। यही था उनके जीने का सलीका। दुनियाबी झँझावातों को हठात् धत्ता बताते हुए।

वह जिंदगी और मौत के बीच में ऐसा कोई चुंबक नहीं रख छोड़ना चाहते थे जो उन्हें अपनी तरफ खींचे। जो जीने को विवश करे और मरने से भयभीत करे।

वह नहीं चाहते थे कि उनके मुखमंडल पर फैला इत्मीनान का उजाला मलिन होने पाए प्रायः घरों में ट्यूशन पढ़ाते वक्त उनके पास कहीं ना कहीं अभिभावक सलाम दुआ करके आके बैठ जाते और फिर दुनिया भर की दुश्वारियाँ और घर के रयाल बया कर जाते। किसी की बीवी ठीक नहीं। कोई घर के लामुहाला खर्चों से उकताया है, किसी का बच्चा जानलेवा बीमारी से ग्रस्त है तो कोई जिंदगी की इस तरह की पीड़ाओं से उकता कर अश... अश करता जिंदगी से पनाह माँग रहा है।

शहर भर में शायद कहीं ऐसे व्यक्ति हैं जिसके पास रोने के लिए कोई दुखड़ा ही नहीं... कुछ छूट जाने की फिक्र ही नहीं... । कुछ खो देने का भय ही नहीं, कहीं कुछ रह जाने की ललक नहीं। दुनिया की तमाम दुखती संवदेनाओं को महसूसने के बाद बड़ी आराम से राहत की साँस लेते। चेहरा नैसख्रगक आनंद की छाया से दमक उठते। वह बड़ी नजाकत से अपनी टोपी ठीक करते और मन ही मन पुलक उठते।

'भाई, हम ही अच्छे, पाने की खुशी ना खोने का गम... '

उधर दादी अम्मा के तेवर ही दूसरे थे। एक टुच्चा सा आदमी उनके मुँह पे थप्पड़ों की बरसात कर गया और वह देखती रह गईं। उस इत्ते से आदमी की ये मजाल। उन्होंने तो अपनी बेटी के लिए रिश्ता माँगा था खैरात थोड़े ही माँगी थी।

मास्टर पुत्तन ने उसी दिन से घर भी आना छोड़ दिया था वरना आते तो उनका मुँह नोंच लेतीं। खौल-खौल रह जातीं। ऐसी जलालत। ऐसी हतक ... बेटे से बताया तो कहता है।

'अम्मा... तुम्हारा मसला है, तुम निबटो, हमें बीच में ना डालो।'

दादी अम्मा की नींद-चैन सब गायब। जब तक इस मरदुए को सबक नहीं सिखा दूँगी चैन से नहीं बैठूँगी... ' उन्होंने मन ही मन एक खतरनाक षड्यंत्रा रच डाला।

एक दिन शाम के चार बजे का वक्त होता होगा। राजा की कोठी जो कोठी कम खंडहर प्रतीत होती थी अपने कलछऊँ, वजूद को झुटपुटे में छिपा लेने की नाकाम कोशिश कर रही थी। घूम-घाम के लौटे पँछियों की चख-चख से आसपास गुँजायमान था। कबूतरों की गुटरगूँ उदासी पैदा कर रही थी। इधर-उधर नँग-धड़ँग बच्चे भागम-भाग लगाए थे। इक्का-दुक्का लोग भी आ-जा रहे थे। एक तरफ दालान में दो व्यक्ति खड़े कुछ गुपचुप कर रहे थे कि सामने सदर से दो सिपाहियों ने प्रवेश किया। इधर-उधर देखते-दिखाते उन दो व्यक्तियों के पास पहुँचे।

'क्यूँ भई, यहाँ कोई मास्टर पुत्तन रहते हैं?' दोनों चौंके।

मास्टर साहब के पीछे पुलिस?

ऐसा कैसे हो सकता है?... हो सकता है ये लोग अपने बच्चों को पढ़वाना चाहते हों। इत्ते तालीम याफ्ता, काबिल इंसान तो पूरे शहर में कहीं नहीं। दोनों ने पुत्तन मास्टर के घर की तरफ संकेत किया।

मास्टर नहा-धोकर निकलने को तैयार ही थे। आँखों में सुरमा लगा रहे थे कि दरवाजे पर दस्तक हुई।

'जी हुजूर, आता हूँ... 'चंद लम्हों के बाद दरवाजा खोला तो ठगे से खड़े रहे गए।

'जी हजरत... कैसे तकलीफ की, भीतर तशरीफ लाएँ... '

सिपाहियों ने पहले एक नजर उन पर फेरी फिर जरी में लिपटे उनके वजूद पर हल्के से मुस्काए। वह थोड़ा अचकचा गए, 'हजूर... कैसे तश्रीफ लाए... कुछ बताएँ... ।

'मास्टर साहब, आपके खिलाफ रिपोर्ट दर्ज करवाई गई है... आप पर दस हजार रुपये की चोरी का इल्जाम है।'

'क्... क्या कह रहे हैं हुजूर... चोरी का इल्जाम... ? वो भी मुझ पर... '

'जी हाँ, हमारे साथ आपको चलना होगा। मुन्नन ठेकेदार की वालदा द्वारा ये रपट लिखवाई गई है। जानते हैं उनको... ?

'बहुत अच्छी तरह... '

'तो चलिए।'

'कहाँ चलना होगा।'

'पुलिस चौकी।'

'पुलिस चौकी?'

'जी हाँ।'

'ये झूठ है हुजूर... मैं और चोरी। मैं सीधा-सादा मामूली सा इंसान हूँ...

ट्यूशन पढ़ाकर रोजी-रोटी कमाता हूँ। मेरा कोई ना कोई... किसके लिए चोरी करूँगा... ?

'हम सब समझ सकते हैं लेकिन हमें अपनी ड्यूटी तो निभानी ही है। आपको जो कहना हो दारोगा साहब से ही कहियेगा।'

मास्टर पुत्तन के हाथ-पैर ठंडे पड़ने लगे। या अल्लाह, ये कौन सा दिन दिखाया है। इससे पहले मुझे मौत क्यूँ नहीं आ गई। दुनिया क्या थूकेगी। किस मुँह से निकलूँ? कितनी फजीहत होगी। क्या बिगाड़ा था मुई बुढ़िया का। दो कौड़ी की इज्जत कर दी... या अल्लाह।... मुझे मौत दे दे... और क्षण भर को वह चौंक पड़े।

फिर सिपाहियों से बोले 'हजरत, जरा आप लोग ठहरें, मैं फारिग हो कर आता हूँ... फिर चलता हूँ।'

उसके बाद तो मास्टर पुत्तन घर की ताख-आलमारियों के पीछे जैसे गुम हो गए। आधा घंटा बीत गया। सिपाहियों को असहजता महसूस होने लगी। खुसुर-फुसर, एक घंटा। सिपाहियों की बेचैनी शुरू हुई। चहलकदमी। ताक-झाँक। घड़ी-घड़ी आवाज लगाते, किंतु कुछ नहीं। दो घंटा। सिपाहियों को उकताहट होने लगी... उफ्... जैसे निचुड़ गए प्रतीक्षा करते-करते। भीतर जाने का साहस नहीं होता। जाने कोई महिला हो पर्देदार... तो भी फजीहत। अब उन्होंने कड़ाई से आवाज देना शुरू किया।

'मास्टर साहब, बाहर आइए... '

'आते हैं कि नहीं... ?'

'हमारी बर्दास्त का इम्तेहान मत लीजिए... '

'हाँ... , हम घर में भी छापा मार सकते हैं।'

'अरे ओ मास्टर साहब, आप बाहर आइए तो सही।'

'किंतु कहाँ?' दरवाजे पर भीड़ बढ़ने लगी। बात फैली। लोगों ने समवेत स्वर में कहा।

'नहीं साहब, चोरी और मास्टर साहब। उनके बेकसूर होने की तो हम कसम खा सकते हैं।'

'सो तो है मगर... '

'अमाँ दारोगा साहब को जवाब भी देना है।' अंततः झल्ला के दोनों सिपाहियों में से एक ने झांका। एक छोटा सा दालान। वह भीतर घुस गया हिम्मत करके।

वहाँ कुछ ना कुछ। मोहतरम भाग निकले क्या... ?'

इधर-उधर नजर दौड़ाई। कमरा दिख गया। दरवाजा भीतर से भिड़ा हुआ।

उसने आवाज लगाई।

'अमाँ मास्टर साहब... ' कोई प्रत्युत्तर नहीं।

झल्लाकर उसने भिड़े पल्लों पर लात जमाई। पल्ले भड़ाक से खुल गए।

भीतर झाँका। झाँका तो घुटी सी चीख निकल गई। उल्टे पाँव भागा, तब तक दूसरा सिपाही भी भीतर दौड़ आया। दोनों साहस करके फिर कमरे में घुसे। मास्टर पुत्तन

साहब अपने पूरे लिबास में सजे-धजे गले में फाँसी का फंदा लगाए छत से झूल रहे थे। आँखें जुबान निकली आ रही थीं। दोनों ने मिल कर उतारा और लिटाया। भीड़ भीतर दौड़ आई। सभी अवाक्। कौन जानता था आज की तैयारी, सज-धज बंदे ने खुदा के वहाँ जाने के लिए की थी। खुद वह भी नहीं जानता था। तभी, बाजू में रखे स्टूल पर पेपर वेट के नीचे दबा छोटा सफेद कागज फड़फड़ा उठा। जैसे सब कुछ जानने की गवाही देने को आतुर हो। मास्टर पुत्तन को पलँग पर लिटाकर टटोला-टटोली

की गई। शायद जान बाकी हो। परिणाम शून्य। तब पुत्तर मास्टर साहब के वहाँ से बरामद उस कागज को उठाया एक सिपाही ने जिसमें उनकी ताजा लिखावट थी।

'दारोगा साहब, अब किस मुँह से आऊँ, दुनिया और आपके सामने। इस हकीर इल्जाम के बाद तो जीते जी मर जाऊँगा। सामने कैसे आऊँ? हिम्मत ही नहीं। मर जाना बेहतर समझता हूँ। जिसने मेरे सिर ये इल्जाम रखा है अल्लाह उसे लंबी उम्र दे। बाकी अल्लाह की कसम मैंने कोई चोरी-वोरी नहीं की। इत्ता कमजर्फ न कभी था, ना हूँ। चोरी का निवाला हराम। चोरी के इल्जाम के साथ जीने की बनिस्बत मर जाना बेहतर समझता हूँ। गैरतमंद इंसान हूँ। मेहरबानी करके नाफरमानी

के लिए माफ करें। मेरी मौत को खुदा के वास्ते, बुजदिली या खुदकुशी ना समझें। ये भी एक तरह की 'आनर कीलिंग' है।

अल्लाह हाफिज

फकत

मास्टर पुत्तन अली बेग